वर्ष : 1 अङ्क : प्रवेशाङ्क फरवरी-अप्रैल 2014 ISSN 2347 - 6605

वाक् सुधा

VAAK SUDHA

(अन्तर्राष्ट्रीय त्रैमासिक शोध पत्रिका)

संरक्षक :

प्रो. दलवीर सिंह चौहान

पूर्व अध्यक्ष, संस्कृत-विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया

रूपेश कुमार चौहान

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक एवं सम्पादक

द्वारा 47, ब्लॉक ए-3, गली नं. 5, धर्मपुरा एक्सटेंशन, दिल्ली-43 से प्रकाशित *एवं डॉल्फिन प्रिंटोग्राफिक्स, 4ई/7, पाबला बिल्डिंग, झंडेवालान् एक्सटेंशन, नई दिल्ली द्वारा मुद्रित।*

दूरभाष संख्या-08287473549, 09911585232, 09810636082.

Email : vaaksudha@gmail.com • *Website :* www.vaaksudha.com

सलाहकार परिषद् :

महामहोपाध्याय प्रो. वेद प्रकाश शास्त्री
(पूर्व उप-कुलपति, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार)

प्रो. शंकर दयाल द्विवेदी
(संस्कृत विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय)

प्रो. पवन अग्रवाल
(हिन्दी एवं आधुनिक भाषा विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय)

प्रो. मोहम्मद मंसूर आलम
(अध्यक्ष, उर्दू विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया)

प्रो. आभा त्रिवेदी
(पाश्चात्य इतिहास विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय)

प्रो. राजेश रंजन
(पालि विभाग, नालन्दा नव-महाविहार)

सम्पादक मंडल :

डॉ. इन्तसार आलम
(उज्बेक भाषा विशेषज्ञ, जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय)

डॉ. अजय मिश्रा
(भूगर्भ विज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय)

डॉ. रसाल सिंह
(हिन्दी विभाग, किरोड़ीमल कॉलेज)

सम्पादक :
डॉ. रूपेश कुमार चौहान

उप-सम्पादक :
डॉ. देवेन्द्र नाथ ओझा

प्रबंध सम्पादक :
श्री ठाकुर प्रसाद चौबे

विधिक सलाहकार :
श्री आनन्द विकास मिश्रा

तकनीकी सलाहकार :
स्मित मनहर, विवेक कुमार आदित्य
(बी.टेक.)

ग्राफिक डिजाइनर :
रोहित आनंद

- सभी पद अवैतनिक एवं परिवर्तनीय हैं
- **'वाक् सुधा'** से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल दिल्ली न्यायालय के अधीन होंगे।
- सारे भुगतान मनीआर्डर : चेक/ बैंक ड्राफ्ट **'वाक् सुधा'** के नाम से किए जाएं। कृपया दिल्ली से बाहर के चेक में बैंक कमीशन के 35.00 रुपये अतिरिक्त जोड़ें।

अनुक्रमणिका

सम्पादकीय	6
दलित साहित्य चिंतन का भाषायी आदर्श *डॉ. अनिल कुमार*	8
भारत का 17वाँ वेव्स सम्मेलन शिक्षा और नैतिकता पर वैदिक चिन्तनः आधुनिक संदर्भ में (22-24 नवम्बर, 2013) ईशावास्योपनिषद्– ''नैतिक शिक्षा और मानव कल्याण'' *रीना कुमारी*	12
बाण के गद्य में सौंदर्याधायक तत्त्व *डॉ. मन्जू लता*	15
वाल्मीकि रामायण में पारिवारिक मूल्यबोध *सुशील कुमारी*	19
वास्तुशास्त्रीय विनियोग की दृष्टि से केदारनाथ मंदिर *डॉ. सर्वेन्द्र कुमार*	22
सिन्धु सभ्यता कालीन वस्त्र उद्योगः एक पुनरावलोकन *निधि सिद्धार्थ*	25
चाक के केन्द्र में स्त्री *डॉ. राम किशोर यादव*	30
रामेश्वरम् ज्योतिर्लिङ्ग मंदिर की वास्तुकला *डॉ. रमण कुमार*	33
विंध्य प्रदेश की भागीदारी : प्रथम आम चुनाव (1952) के संदर्भ में *डॉ. साधना कुशवाहा*	36
यज्ञ की महत्ता *डॉ. सुनन्दा*	42
भारतीय वाङ्मय में दार्शनिक राम *डॉ. स्वर्ण रेखा*	45
सिद्धान्त ज्योतिष की उपयोगिता *कान्ता*	48
भुवनेश्वर की रचना दृष्टि *हेमंत रमण रवि*	53
मीमांसा सम्मत पदार्थ मीमांसा *डॉ. राजेश कुमार*	59
साधनशक्ति का संख्या विमर्श *योगेश शर्मा*	63
भारतीय संस्कृत अभिलेखों में वैदिक धर्म *डॉ. सन्दीप कुमार*	67
विकास के बदलते आयाम और नया भूमि अधिग्रहण विधेयक *पुष्पा मीणा*	72
पर्यावरणीय चिन्तन : अतीत एवं वर्तमान *ईरा भारद्वाज*	76
भारतीय नीतिशास्त्र : विकास एवं विशेषताएँ *डॉ0 समीर मिश्रा*	84
वर्तमान शिक्षा के सन्दर्भ में वैदिक शिक्षा की उपादेयता *डॉ. सोमवीर*	89

ISSN : 2347-6605

बुंदेलखण्ड की संधि के अन्तर्गत आने वाली रियासतों का इतिहास 93
डॉ. साधना कुशवाहा
आदिवासी जीवन-संघर्ष का प्रामाणिक दस्तावेज- 'ग्लोबल गाँव के देवता' 98
धर्मेन्द्र प्रताप सिंह
अद्वैत वेदान्ती भारतीतीर्थ : एक परिचय 104
निर्मला
भारत-अमरीका संबंधः शीतयुद्धोत्तर युग में 109
अखिलेश कुमार तिवारी
मुहूर्त की अवधारणा 113
डॉ. प्रीति शर्मा
उपनिषद् का नीतिदर्शन 117
रश्मि कुमारी
ऋग्वेदीय दशम् मण्डल की तिङन्त क्रियापदों की धातुओं का पदवैज्ञानिक विश्लेषण 119
सोनिया
वैष्णव दार्शनिक आचार्य रामानन्द 128
डॉ. राजेश कुमार
पर्यावरण दार्शनिक कालिदास और अभिज्ञानशाकुन्तलम् 134
प्रमोद पाण्डेय
कालिदास के काव्य में नारी सौन्दर्य 138
डॉ. ब्रह्मचारी पाण्डेय
भारतीय संसदीय प्रक्रिया की विवेचना 141
जिया लाल
सियारामशरण गुप्त का आख्यानक काव्य एवं गाँधीवाद 146
आशुतोष तिवारी
अन्तर्जातीय विवाह और उसकी प्राचीन परम्परायें 155
डॉ. धर्मेन्द्र कुमार मिश्र
पुरुषार्थ की अवधाारणाः एक अनुशीलन 158
डॉ. विनोद प्रसाद सिंह
अथर्ववैदिक पारिवारिक व्यवस्था एवं उसकी आधुनिक उपयोगिता 162
धनेश कुमार सुमन
''बाणभट्ट के काव्य में प्रकृति-चित्रण'' 166
डॉ. मंजू लता
बुद्धकालीन समाज में स्त्रियों की दशा 171
डॉ. राजीव कुमार
मनोरोग और गीता 178
सन्दीप कुमार
''उपनिषद् में शब्द-तत्त्व का विवेचन'' 181
डॉ. अनुज कुमार
वेदान्त दर्शन एवं एसके प्रमुख सम्प्रदाय 184
निर्मला
मीरा की सामाजिक चेतना 189
विद्याराम मीना
महात्मा गाँधी के आध्यात्मिक प्रयोग 191
डॉ. अर्चना उपाध्याय
संत रज्जब अली की वैचारिकता 195
गगन बाकोलिया

महात्मा गाँधी के आध्यात्मिक प्रयोग

डॉ. अर्चना उपाध्याय

''मेरा कर्तव्य तो आत्मदर्शन है, ईश्वर का साक्षात्कार है, मोक्ष है, मेरी सारी क्रियाएँ इसी दृष्टि से होती हैं।''[1]

गाँधी जी के जीवन पर जब हम दृष्टि डालते हैं तो उनका सम्पूर्ण जीवन ही एक तपस्वी के जीवन की भाँति अनेकानेक व्रतों और अनुष्ठानों से अनुप्राणित है। ''मेरा सारा लेखन इसी दृष्टि से है और मेरा राजनैतिक क्षेत्र में आना ही इसी वस्तु के अधीन है।''[2]

भोजन तथा ब्रह्मचर्य का प्रयोग आध्यात्म से जुड़ा हो, यह बात कुछ हद तक सामान्य लगती है किन्तु लेखन, उसमें भी राजनीतिक बहसों और मुद्दों पर लिखना और ऐसा लिखना, जिससे कहीं न कहीं ईश्वरीय सत्ता के दर्शन हों- आम आदमी के लिए अकल्पनीय है। ऐसा कार्य तो महात्मा गाँधी जैसे विलक्षण व्यक्तित्व द्वारा ही संभव हो सका है। यदि मौजूदा दौर की राजनीति से उसकी तुलना की जाए तो यह उक्ति असंभव सी जान पड़ती है।

पोरबंदर में, बाल्यावस्था में अपने पिता के साथ रामचन्द्र जी के मंदिर में प्रतिदिन रामायण का पाठ सुनने जाना, इसे गाँधी रामायण के प्रति अपने प्रेम की बुनियाद मानते हैं। तुलसीदास कृत रामायण गाँधी की दृष्टि में भक्तिमार्ग का सर्वोत्कृष्ट ग्रंथ है। तत्पश्चात् राजकोट में माता-पिता के साथ शिवालय और राममंदिर सभी के दर्शन करते हुए अनायास ही हिन्दू धर्म के प्रत्येक सम्प्रदाय के प्रति हृदय में आदरभाव दृढ़ हुआ। पिता की रुग्णावस्था में उनकी सेवा-सुश्रुषा करते हुए, पिता के पास आने-जाने वाले जैन साधुओं, पारसी और मुसलमान मित्रों द्वारा होने वाली धार्मिक चर्चाओं को सरस भाव से सुनते रहने का भी गाँधी के मन पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा। बचपन में ही सभी धर्मों के प्रति आदरभाव पनपा। इसी समय पिता द्वारा सहेजकर रखी गई पुस्तकों के संग्रह से मनुस्मृति को पढ़ने का भी अवसर मिला। उसके विभिन्न प्रसंगों से सहमत-असहमत होते हुए भी उनके मन ने यह निष्कर्ष तो निकाल ही लिया कि-''यह संसार नीति पर टिका हुआ है। नीतिमात्र का समावेश सत्य में है, सत्य की खोज तो करनी ही है।''[3]

युवावस्था में कानून की पढ़ाई के निमित्त, विलायत में रहते हुए लगभग एक वर्ष हुआ था, दो थियोसोफिस्ट भाइयों से परिचय बढ़ा। उनके द्वारा गाँधी को संस्कृत में गीता पढ़ने का निमंत्रण मिला। इसके पूर्व कभी गीता न पढ़े जाने पर गाँधी शर्मिन्दा हुए और उन भाइयों के साथ ही गीता का अध्ययन किया। दूसरे अध्याय के आखिरी श्लोकों में, जिसका अभिप्राय इस प्रकार है- विषयों का चिन्तन करने वाले पुरुष को उनमें आसक्ति उत्पन्न होती है, आसक्ति से कामना होती है और कामना से क्रोध उत्पन्न होता है, क्रोध से मूढ़ता उपजती है, मूढ़ता से स्मृति भ्रांत होती है, स्मृति भ्रांत होने पर ज्ञान का नाश हो जाता है और जिसका ज्ञान नष्ट हो गया, वह मृतक के समान है। गाँधी ने इन श्लोकों को सार्थक और जीवनमंत्र माना। ''इन श्लोकों का मेरे मन पर गहरा असर पड़ा। उनकी ध्वनि मेरे कानों में गूँजती ही रहती है। भगवद्गीता अमूल्य ग्रंथ है, यह मुझे उस समय प्रतीत हुआ। यह मान्यता धीरे-धीरे बढ़ती गई और आज मैं तत्त्वज्ञान के लिए उसे सर्वोत्तम ग्रंथ मानता हूँ। निराशा के समय में उस ग्रंथ ने मेरी अमूल्य सहायता की है।''[4]

इन्हीं भाइयों के कहने पर गाँधी ने 'आर्नल्ड' की बुद्ध-चरित (लाइट ऑफ़ एशिया) पढ़ी। इसी क्रम में गाँधी मिसेज़ बेसेंट से मिले और मैडम 'ब्लैट्वस्की' की पुस्तक थियोसोफी की कुंजी (की टू थियोसोफी) पढ़ी, जिससे हिन्दू-धर्म के विषय में और अधिक

जानने की जिज्ञासा बढ़ी। कालान्तर में कई भद्र ईसाईयों के सानिध्य में बाइबिल का भी अध्ययन किया। गाँधी के हृदय में अन्य धर्माचार्यों के जीवन-चरित और उनके विचारों को जानने-समझने की इच्छा प्रबल हुई। किसी मित्र के सुझाने पर 'कार्लाईल' की विभूतियाँ और विभूतिपूजा (हीरोज़ ऐंड हीरो वर्शिप) पुस्तक भी पढ़ी। धार्मिक पुस्तकों को पढ़ने के बाद गाँधी ने नास्तिकतावाद के विषय में भी एक पुस्तक का अध्ययन किया किंतु गाँधी के अनुसार उसका इनपर कोई प्रभाव न पड़ा।

ईसाई मित्रों द्वारा बार-बार आग्रह किए जाने पर भी गाँधी ईसाई-धर्म को स्वीकार न कर सके। हिन्दू-धर्म की भी कमियाँ इन्हें बराबर खटकती रही। ''पर जैसे मैं ईसाई-धर्म को स्वीकार न कर सका, वैसे हिन्दू-धर्म के सम्पूर्ण अथवा सर्वश्रेष्ठ होने का भी मैं उस समय निश्चय न कर पाया। हिन्दू-धर्म की त्रुटियाँ मेरी आँखों के सामने फिरा करती थीं। अस्पृश्यता यदि हिन्दू-धर्म का अंग हो तो वह सड़ा हुआ और फालतू अंग जान पड़ा।''[5] ईसाई मित्रों की भाँति मुसलमान मित्र भी निरन्तर गाँधी से अपने धर्म की खूबियों की चर्चा किया करते और उनपर अपना प्रभाव डालने का यत्न करते। पूरे सोच-विचार के साथ गाँधी धर्मनिरपेक्षता के समर्थक हुए और सभी धर्मों के साररूप 'सत्य' को स्वीकार किया।

गाँधीजी सत्य और अहिंसा के जीवट पुजारी के रूप में हमारे सामने खड़े होते हैं। कठिन से कठिन चुनौतियों का भी उन्होंने अहिंसात्मक उपकरणों से ही सामना किया। दक्षिण-अफ्रीका में अपने प्रवास के दौरान उन्होंने अहिंसा के मर्म को गहराई से समझा और दृढ़ता से उसे पकड़ा। दक्षिण-अफ्रीका में डरबन से चार्ल्सटाउन तक की यात्रा करते हुए, रेल के सफर में पहले दर्जे का टिकट होने पर भी एक सहयात्री-''मेरे चमड़े को रंगदार देखकर कुछ भड़का''[6]- और रेलवे के अधिकारी द्वारा इस काले मुसाफिर को रेल के आखिरी डिब्बे में जाने का आदेश हुआ। गाँधी द्वारा इन्कार किए जाने पर उन्हें ढकेल कर नीचे उतार दिया गया। ''सिपाही आया। उसने हाथ पकड़ा और मुझे धक्का देकर नीचे उतारा।''[7] पुनः चार्ल्सटाउन से जोहान्सबर्ग घोड़े की सिकरम से जाते हुए भी अपने साथ हुए अपमान और हिंसा का प्रत्युत्तर धैर्य और समझदारी से देते हुए अहिंसा के इस व्रती ने ईश्वरीय शक्ति में अपनी दृढ़ आस्था का परिचय दिया। टिकट दिखाए जाने पर भी गाँधी को सिकरम के भीतर न बैठाकर हाँकने वाले के बगल में बैठाया गया। सिकरम कम्पनी के नायक ने जो कि अन्दर बैठा था, थोड़ी देर बाद स्वयं बाहर बैठने की इच्छा व्यक्त की और गाँधी जी को चालक के पैर के पास नीचे बैठने को कहा। इन्कार करने पर उन्हें शारीरिक और मानसिक प्रताड़ना झेलनी पड़ी। ''मुश्किल से इतना मैं कह पाया था कि तब तक मुझ पर तमाचों की वर्षा होने लगी और वह गोरा मेरी बांह पकड़कर मुझे नीचे ढकेलने लगा। कोचबक्स के पास ही पीतल के सीखचे थे, उनसे मैं लिपट गया, और कलाई उखड़ जाये तो भी सीखचे न छोड़ने की ठान ली। मेरे ऊपर जो गुजर रही थी, यात्री उसे देख रहे थे। वह गोरा मुझे गालियाँ दे रहा था, खींच रहा था और मार भी रहा था। और मैं चुपचाप सब सह रहा था।''[8]

एक अन्य द्रष्टव्य से अहिंसा के प्रति गाँधी जी की दृढ़ता की झलक देखी जा सकती है। सन् 1884 में ट्रांसवाल में कड़ा कानून बनाया गया। उसमें अनेक नियमों के साथ ही एक कानून यह भी था कि हिन्दुस्तानी पटरी (फुटपाथ) पर अधिकारपूर्वक नहीं चल सकते थे। प्रिटोरिया में, गाँधी प्रायः प्रेसिडेंट स्ट्रीट से होकर एक खुले मैदान में टहलने जाया करते थे। एक बार एक सिपाही ने चेतावनी दिए बिना तथा बिना कुछ कहे गाँधी को पटरी पर से ढकेला और उन्हें ठोकर मारकर नीचे उतार दिया। गाँधी सिपाही द्वारा किए गए इस अप्रत्याशित व्यवहार से हैरान हुए और इसका कारण पूछना ही चाह रहे थे कि मि. कोट्स जो कि घोड़े पर सवार होकर उसी रास्ते से गुजर रहे थे, ऊँचे स्वर में बोले- ''गाँधी मैंने सब देखा है। आप मुकदमा चलाना चाहें तो मैं गवाही दूँगा। आप पर इस तरह हमला किया गया, इसका मुझे बड़ा खेद है।''[9] गाँधी ने विनम्रता से कहा- ''इसमें खेद का कोई कारण नहीं। सिपाही बेचारे को क्या मालूम। उसके लिए तो सब काले एक-से हैं।.....मैंने तो नियम ही कर लिया है कि मेरे अपने ऊपर जो गुजरे उसके लिए अदालत नहीं जाऊँगा। अतः मुझे मुकदमा नहीं चलाना

है।''[10] अहिंसा के प्रति अपनी प्रतिज्ञा का निर्वहन करने के लिए गाँधी जी ने अपमान और दर्द का जो घूँट पिया, इतिहास उसका साक्षी है, किन्तु विपरीत से विपरीत परिस्थिति में भी उन्होंने अपने धर्म का त्याग नहीं किया, अहिंसा के धर्म पर उनकी निष्ठा अन्त तक बनी रही। प्रेम और शांति के इस दिव्य हथियार के समक्ष अंग्रेजों की भी क्रूरता हार मान गई।

दक्षिण अफ्रीका में रहते हुए भारतीयों के अधिकार के लिए गाँधी ने कई बार अपनी आवाज बुलंद की। गिरमिटिया मजदूरों के हक की लड़ाई हो या प्लेग जैसी जानलेवा महामारी से उन्हें बचाना हो, हर सेवा को उन्होंने ईश्वर की सेवा से जोड़कर ही देखा। दु:खी हिन्दुस्तानियों की सेवा उनका धर्म था। गाँधी के लिए मनुष्य-मात्र की सेवा ही ईश-दर्शन का माध्यम था। गाँधी ने लिखा- ''मैं जो इस प्रकार समाज-सेवा में तन्मय हो गया था, उसका कारण आत्मदर्शन की आकांक्षा थी। ईश्वर की पहचान सेवा से होगी यह मानकर मैंने सेवा-धर्म स्वीकार किया था।''[11]

महात्मा गाँधी ने सेवा-कार्य को निर्मल और निर्बाध गति से चलाने के लिए ब्रह्मचर्य की महिमा को महसूस किया। गृहस्थाश्रय में रहते हुए, समाज और देश को अधिकाधिक समय और पूर्ण समर्पण कैसे मिले? इस बात की चिंता ने गाँधी को ब्रह्मचर्य के लिए प्रेरित किया। गाँधी के अनुसार संयम-पालन की वृत्ति तो उनमें पहले से ही प्रबल थी किन्तु, भली-भाँति विचार और करीबी मित्रों से चर्चा के बाद सन् 1906 में ब्रह्मचर्य व्रत लिया। नेटाल के जूलू-विद्रोह में घायल जूलूओं की सेवा का कार्य अपने जिम्मे लिया। यहीं यह विचार प्रौढ़ हुआ। ''.....जब हमें किसी घायल को लेकर या खाली चलना होता तो मैं विचारमग्न हो जाता था। यहाँ मेरे ब्रह्मचर्य विषयक विचार परिपक्व हुए। अपने साथियों से भी मैंने इसकी कुछ चर्चा की। ईश्वर दर्शन के लिए ब्रह्मचर्य अनिवार्य वस्तु है यह तो मुझे अभी प्रत्यक्ष नहीं हुआ था, पर सेवा के लिए इसकी आवश्यकता मेरे सामने स्पष्ट हो गई।''[12] विवाहित होकर भी ब्रह्मचर्य पालन किया जाये तो कुटुम्ब सेवा समाज-सेवी की विरोधी नहीं होती।''[13] यह ब्रह्मचर्य व्रत सेवा के ही निमित्त था और समाज की सेवा गाँधी के लिए सदैव ही ईश्वर साक्षात्कार का माध्यम बनकर रही। ''ब्रह्मचर्य के सम्पूर्ण पालन का अर्थ ब्रह्मदर्शन है, यह ज्ञान मुझे शास्त्र के द्वारा नहीं हुआ। यह अर्थ मेरे सामने शनै:शनै: अनुभव सिद्ध होता गया।''[14]

अपने जीवन में खुराक के भी अद्‌भुत और कठिन प्रयोग गाँधी ने किए। भोजन गाँधी जी के लिए मात्र जीभ-लोलुपता की तृप्ति या उदर-तृप्ति के लिए नहीं था। गाँधी ने माना कि मनुष्य को आनंद के लिए नहीं, अपितु शरीर के निर्वाह के लिए ही भोजन ग्रहण करना चाहिए। गाँधी ने ब्रह्मचर्य पालन के लिए खुराक और उपवास की आवश्यकता को समझा। इस सिलसिले में सर्वप्रथम दूध का त्याग किया। दूध को इन्द्रिय विकार पैदा करने वाला पदार्थ समझकर दूध पीना छोड़ दिया। अन्नाहार पर अंग्रेज-लेखकों द्वारा लिखित कुछ पुस्तकों को पढ़ने के बाद गाँधी का यह विचार और अधिक परिपुष्ट हुआ कि दूध शरीर-निर्वाह के लिए जरूरी नहीं है। दूध त्याग के बाद अन्न का त्याग भी किया गया और फलाहार का प्रयोग आरम्भ हुआ, साथ ही साथ संयम हेतु उपवास भी चलने लगा। सभी व्रतों का धारण और पालन शुरू में स्वास्थ्य की दृष्टि से हुआ किन्तु शनै:शनै: वह आध्यात्म और धर्म से जुड़ता चला गया। ''मन, वचन, कार्यों से ब्रह्मचर्य का पालन कैसे हो, एक चिंता तो यह थी, और दूसरी चिंता यह कि सत्याग्रह के युद्ध के लिए अधिक से अधिक समय कैसे बचे? और अधिक शुद्धि कैसे हो? इन दोनों चिंताओं ने मुझे खुराक में अधिक संयम और विशेष परिवर्तन करने की प्रेरणा दी। इसके सिवा पहले जो परिवर्तन में खासतौर से आरोग्य की दृष्टि से करता था, वे अब धार्मिक दृष्टि से होने लगे। इनमें उपवास और अल्पाहार ने अधिक स्थान लिया।''[15]

महात्मा गाँधी का सम्पूर्ण जीवन ही सत्य का साक्षी रहा। जीवन के प्रत्येक जाने-अनजाने क्रिया-कलाप में, विभिन्न प्रयोगों में अपने चहुँ और सत्य के दर्शन से विमुग्ध होते रहे। सत्य ही परमेश्वर है और उसी सत्यरूपी परमेश्वर के प्रकाश में आजीवन अपना मार्ग स्वयं प्रशस्त करते रहे। ''परमेश्वर की व्याख्याएँ अनगिनत हैं क्योंकि उसकी विभूतियाँ भी अनगिनत हैं। ये विभूतियाँ मुझे आश्चर्य में डाल देती हैं। मुझे तनिक देर के लिए मोह भी लेती हैं। पर मैं पुजारी तो सत्यरूपी परमेश्वर का ही हूँ। वही एक सत्य है और अन्य सब

मिथ्या है। यह सत्य मुझे मिला नहीं; पर मैं इसका शोधक हूँ। इसके शोध में मैं अपनी प्यारी-से-प्यारी वस्तु भी त्यागने को तैयार हूँ। इस शोधरूपी यज्ञ में इस शरीर को भी होमने की मेरी तैयारी है और शक्ति है, ऐसा मुझे विश्वास है पर इस सत्य का साक्षात् न कर लेने तक मेरी अन्तरात्मा जिसे सत्य समझती है, उस काल्पनिक सत्य को अपना आधार मानकर, अपना दीपक समझकर, उसके आश्रय में अपना जीवन बिताता हूँ।''[16]

एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी-विभाग,
श्यामलाल सांध्य कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

संदर्भ-

1. सत्य के प्रयोग, महात्मा गाँधी की आत्मकथा का हिन्दी रूपान्तर प्रथम संस्करण 2010, प्रस्तावना
2. वही, प्रस्तावना
3. पहला भाग, धर्म की झाँकी, पृ. सं.-36
4. पहला भाग, धार्मिक परिचय, पृ.सं.-62
5. दूसरा भाग, धार्मिक मंथन, पृ. सं.-112
6. दूसरा भाग, प्रिटोरिया जाते हुए, पृ. सं.-93
7. दूसरा भाग, प्रिटोरिया जाते हुए, पृ. सं.-93
8. दूसरा भाग, अधिक दुर्दशा, पृ. सं. 95
9. दूसरा भाग, कुलीपने का अनुभव, पृ. सं.-107
10. वही
11. दूसरा भाग, धर्म निरीक्षण, पृ. सं. 126
12. चौथा भाग, हृदय मंथन, पृ. सं. 245
13. चौथा भाग, हृदय मंथन, पृ. सं. 245
14. तीसरा भाग, ब्रह्मचर्य-2, पृ. सं.-162
15. चौथा भाग, खुराक के अधिक प्रयोग, पृ. सं.-248
16. प्रस्तावना